अध्यात्म ज्ञान एवं चिन्तन संस्था

(SOCIETY FOR ADHYATMA STUDIES)

17, सिविल लाइन्स, कमिश्नर ऑफिस के सामने, मुरादाबाद – 244001
मो0 9412241221

धर्म क्या है?

विश्व के विभिन्न भू–भागो में, विभिन्न कालो में, विभिन्न समाजों में धर्म को अलग–अलग तरीके से परिभाषित किया गया है। कहीं पर धर्म को ईश्वर की उपासना का साधन माना गया है तो कहीं पर धर्म को ईश्वर की कृपा से समृद्धि प्राप्त करने का साधन माना गया है। कहीं पर धर्म से सुख–शान्ति प्राप्त करने की बात कही गई है। कहीं पर धर्म से आत्मिक ज्ञान की बात कही गई है। कहीं पर धर्म में विभिन्न कर्म–काण्डो की प्रभुता मानी गई है और कहीं पर धर्म के लिये किसी भी कर्म–काण्ड को आवश्यक नहीं माना गया है। कहीं पर धर्म का एक अभिन्न अंग मूर्ति पूजा है तो कहीं पर मूर्ति पूजा को अनुचित बताया गया है। कहीं पर विचारकों ने यह माना है कि धर्म का एक बड़ा कार्य समाज को सुव्यवस्थित रखना तथा व्यक्तियों को उच्छृखंल व स्वेच्छाचारी होने से बचाना है अतः उन्होने धर्म में समाज को सुचारु रुप से चलाने में उपयोगी नियमों का समावेश किया है। कहीं पर धर्म को गरीब की अफीम की संज्ञा दी गई है।

विश्व के विभिन्न भू–भागो में विभिन्न धर्म प्रचलित रहे हैं। कुछ के अनुयायी अधिक हैं और कुछ के कम। इस समय जो धर्म अधिक प्रचलित हैं वे हैं – ईसाई धर्म, इस्लाम धर्म, हिन्दू धर्म, बौद्ध धर्म, यहूदी धर्म, पारसी धर्म, जैन धर्म, सिख धर्म, बहाई धर्म। इन सभी धर्मों में मूल सिद्धांत लगभग एक से ही हैं। सभी धर्मों में ईश्वर के अस्तित्व को माना गया है। सभी धर्मों में मनुष्य को अपने आचार–विचार को शुद्ध रखने के लिये कहा गया है। सभी धर्मों में सत्य, सदाचार, परोपकार, सहनशीलता, प्रेम, दया, निडरता, बिना कारण हिंसा ना करना आदि पर बल दिया गया है। लगभग सभी धर्मों में वर्णित सिद्धांतो व क्रियाओं को ईश्वर द्वारा घोषित माना गया है। धर्म के नियम विभिन्न विचारकों ने विभिन्न देश–काल की परिस्थितियों का ध्यान में रखते हुये बनाये हैं।

भारतीय दर्शन के अनुसार धर्म वह है जिससे जीवन धारण किया जाता है – "य धारयति स धर्मः" – अर्थात जीवन जीने का जो तरीका है वह धर्म है अथवा धर्म जीवन जीने का तरीका है अथवा जिस आचरण से जीवन यापन किया जाता है वह धर्म है। भारतीय दर्शन

में धर्म के तीन आयाम बताये गये हैं – कर्म काण्ड़, उपासना एवं आचार–विचार की शुद्धता। कर्म काण्ड़ में सभी प्रकार के पूजा, व्रत, अनुष्ठान, प्रार्थना आदि आते हैं। उपासना में ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण का भाव आता है जिसमें व्यक्ति अपना अहंकार समाप्त करके अपना सब कुछ ईश्वर को अर्पण कर देता है और अपने मन को ध्यान द्वारा ईश्वर के प्रति केन्द्रित करता है। आचार–विचार की शुद्धता में हमारा दूसरों के साथ व्यवहार एवं स्वयं के लिये किया गया आचरण आते हैं।

महाभारत में यक्ष द्वारा प्रश्न करने पर धर्मराज युधिष्ठिर ने धर्म का विवेचन इस प्रकार किया –

वेदा विभिन्ना स्मृत्यः विभिन्ना नासौ मुनिर्यस्य मतम् न भिन्नम्।
धर्मस्यतत्त्वं निहितं गुहायां महाजनो येन गतः स पंथः।।

अर्थात् वेदों में भिन्न–भिन्न मत व्यक्त किये गये हैं, स्मृतियों में भी भिन्न–भिन्न मत व्यक्त किये गये है, कोई ऐसा मुनि नहीं है जिसने भिन्न मत व्यक्त न किया हो। धर्म का तत्व गहरी गुफा में छिपा है। श्रेष्ठ व्यक्ति जिस पर चलते हैं वही मार्ग है।

मनु स्मृति में धर्म को परिभाषित किया गया है। मनु–स्मृति को भारतीय दर्शन का समाजशास्त्र कहा जा सकता है। उसमें धर्म के 10 लक्षण बताये गये हैं। उनका पालन करना ही धर्म का आचरण करना है। वह लक्षण निम्न प्रकार हैं –

धृतिक्षमादमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीविद्यासत्यमक्रोधः दशधर्मलक्षणं।।

1. धृति
2. क्षमा
3. दम
4. अस्तेय
5. शौच
6. इन्द्रिय निग्रह
7. धी
8. विद्या
9. सत्य
10. अक्रोध

1. **धृति अर्थात सहनशीलता –** जीवन में बहुत बार ऐसी परिस्थितियां आती हैं जो हमारी इच्छाओं और परिकल्पनाओं के विपरीत होती हैं और वे हमें उद्वेलित कर देती हैं। ऐसी स्थिति में विचलित न होना और विपरीत परिस्थितियों में भी मन, वचन व कर्म से सही मार्ग पर बने रहना ही सहनशीलता है। यह देखा जाता है कि जैसा हम चाहते हैं वैसे ही सब कुछ नहीं हो पाता है। हम अपनी इच्छाओं के अनुरुप बहुत से लक्ष्य निर्धारित करते हैं परन्तु बहुत सी अनचाही परिस्थितियों के कारण हम उन लक्ष्यों को प्राप्त नहीं

कर पाते। ऐसे में हमारे मन में एक क्षोभ की स्थिति उत्पन्न होती है और कभी–कभी हम अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिये गलत मार्ग भी अपना लेते हैं। सहनशीलता वह शक्ति है जो विपरीत परिस्थितियों में भी हमारा मानसिक सन्तुलन बनाये रखती है और हमें सही मार्ग पर चलाये रखती है।

2. **क्षमा –** दूसरे व्यक्ति द्वारा किये गये व्यवहार या कही गई बात या किये गये कार्य, जो हमारी इच्छा के विपरीत हों, को क्षमा करना ऐसी शक्ति है जो हमारे मन को शान्त व सन्तुलित रखती है। मानव स्वभाव है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने विचार को और अपनी बात को श्रेष्ठ मानता है। वह दूसरे की भी वही बात सही समझता है जो उसके अपने विचारों से मेल खाती है। दूसरे व्यक्ति द्वारा किये गये ऐसे व्यवहार या कार्य या वचन, जो हमारी इच्छा के विपरीत हों, को हम उसकी त्रुटि या भूल मानते हैं और उसके कारण हमारा मन उद्वेलित हो जाता है। ऐसे में यदि हम उस व्यक्ति की त्रुटि के लिये उसे क्षमा कर दें तब हम उस मानसिक तनाव से बच जाते हैं। क्षमा वह शक्ति है जो हमे शान्ति और सुख देती है। जब भी हमें ऐसा अनुभव हो कि दूसरे व्यक्ति द्वारा त्रुटि की गई है तो सबसे पहले हमें स्वयं को उसके स्थान पर रखकर यह देखना चाहिये कि यदि हम उसके स्थान पर उसकी परिस्थिति व मनःस्थिति में होते तब हम क्या करते। हो सकता है कि उस स्थिति में हम भी वैसा ही करते जैसा उसने किया। दूसरे की त्रुटियों को क्षमा करने से कई लाभ हैं। क्षमा करने से हमारा मन उद्वेलित होने से बचा रहता है। क्षमा करने से दूसरा व्यक्ति स्वयं में लज्जित होकर यह विचार करने लगता है कि उसने वास्तव में त्रुटि की थी और वह अनजाने ही उस त्रुटि को सुधारने का प्रयत्न करता है। क्षमा करने से आपसी वैमनस्य उत्पन्न ही नही होता। क्षमा करने से दूसरे व्यक्ति के मन में हमारे लिये आदर का भाव उत्पन्न होता है जो अन्तिम रुप से हमारे लिये ही लाभकारी है।

3. **दम अर्थात मन पर नियन्त्रण –** मन चंचल होता है और हमें चलायवान रखता है। मन में नित नवीन इच्छायें–कामनायें उत्पन्न होती रहती हैं जिनका कभी अन्त नहीं होता। मन हमारी शारीरिक क्षमता व कार्यकुशलता को अत्यधिक प्रभावित करता है। मन ही हमें उच्चतम शिखर तक ले जाता है और मन ही हमें निम्नतम स्तर तक गिरा सकता है। हमारे अंतःकरण के चार भागों मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार में मन सबसे अधिक शक्तिशाली है। मन से ही हम सुख व दुःख का अनुभव करते हैं। मन से ही हम डर का अनुभव करते हैं। जो व्यक्ति अपने मन पर नियन्त्रण कर सकता है वह सर्वदा सुखी रह सकता है। मन पर नियन्त्रण करना आसान नहीं है बल्कि अत्यन्त कठिन है। अभ्यास और वैराग्य से ही मन पर नियन्त्रण संभव है। अभ्यास का अर्थ है कि हम बार–बार मन पर नियन्त्रण करने का प्रयत्न करते रहें। बहुत बार असफल हो जाने पर

भी लगातार प्रयासों से हमें सफलता मिल सकती है। वैराग्य का अर्थ है विभिन्न विषयों से विरक्ति की भावना। वैसे तो विषयों से विरक्ति होने के कई कारण हो सकते हैं जैसे कि शारीरिक अक्षमता, समाज के डर से विषयों में प्रवृत्त न होना, धन के अभाव में विषयों में प्रवृत्त न हो सकना, विषयों की पूर्ति के साधन उपलब्ध न हो पाना आदि। लेकिन इन सब कारणों से विषयों से निवृत्त होना वैराग्य नहीं है। विषयों की उपलब्धता सुलभ होते हुये भी उनके मोहजाल से बचे रहना वैराग्य है।

4. **अस्तेय अर्थात चोरी न करना –** जो हमारे लिये नही है वह न लेना अस्तेय है। इसमें दूसरे को धोखा नहीं देना, कपट व चालबाजी से नहीं कमाना, कर की चोरी नहीं करना, बिजली आदि की चोरी नहीं करना, दूसरे के विचारों को भी नहीं चुराना आदि आते हैं।

5. **शौच अर्थात आन्तरिक एवं वाह्य शुद्धता –** हमारे शरीर के साथ–साथ हमारे अंतःकरण की शुद्धता भी अत्यन्त आवश्यक है। हमें अपने विचारों, भावनाओं और संस्कारों को भी उसी प्रकार नित्य प्रति शुद्ध करते रहना चाहिये जिस प्रकार हम अपने शरीर को, अपने निवास स्थान को तथा अपने परिवेश को शुद्ध रखते हैं। इसके लिये स्वाध्याय, अच्छी पुस्तकों का पठन–पाठन, ज्ञानी व्यक्तियों का संग निरन्तर करते रहने की आवश्यकता है।

6. **इन्द्रिय निग्रह अर्थात दसों इन्द्रियों पर नियन्त्रण –** हमारी पांच ज्ञानेन्द्रियां – आंख, नाक, कान, त्वचा और रसना तथा पांच कर्मेन्द्रियां – वाणी, हस्त, पाद, उपस्थ और गुदा हैं। इन्ही दस इन्द्रियों द्वारा हम अपने समस्त क्रिया–कलाप करते हैं। यह इन्द्रियां हमें अपने–अपने विषयों की ओर खींचती हैं। उससे हमारा मन और बुद्धि भ्रमित होते हैं। यदि यह इन्द्रियां हमारे वश में हों तब हम एक व्यवस्थित और सुखी जीवन व्यतीत कर सकते हैं। अपनी बुद्धि और मन से इन दसो इन्द्रियों पर नियन्त्रण किया जा सकता है। कठोपनिषद में 'रथ रुपक' वर्णित किया गया है जिसमें हमारे शरीर को रथ माना है और हमारी दस इन्द्रियों को दस घोड़ों के समान माना हैं जो उस रथ से जुड़े हैं। मन उन घोड़ों की लगाम है और बुद्धि उस रथ का सारथी है। उस रथ में जो रथ का स्वामी बैठा है वह आत्मा है। इस 'रथ रुपक' के द्वारा यह बताया गया है कि जो व्यक्ति अपनी इन्द्रियों को अपने मन द्वारा नियन्त्रित करके अपनी बुद्धि के अनुसार चलाता है वह निश्चित रुप से अपने लक्ष्य तक पहुंचता है, परन्तु जिसकी बुद्धि अपने मन तथा इन्द्रियों पर नियन्त्रण नहीं रख पाती है वह कभी भी लक्ष्य तक नहीं पहुंच पाता क्योंकि उसकी इन्द्रियों रुपी घोड़े उसे विभिन्न दिशाओं में भटकाते रहते हैं। अतः इन्द्रिय निग्रह वह शक्ति है जो हमें अपने परम लक्ष्य तक पहुंचाती है।

7. **धी अर्थात बुद्धि–विवेक शक्ति –** बुद्धि–विवेक शक्ति हमारी ज्ञानेन्द्रियों एवं मन से ऊपर है। क्या अच्छा है और क्या बुरा है, क्या कर्तव्य है और क्या अकर्तव्य है, क्या लाभकारी है और क्या अलाभकारी है, इसका निर्णय करने की शक्ति ही विवेक शक्ति है। जब हम अपने समस्त कार्यों को अपने बुद्धि–विवेक के अनुसार अच्छी प्रकार सोच–समझ कर करते हैं तब हम सुख और शान्ति को प्राप्त करते हैं।

8. **विद्या अर्थात आत्म ज्ञान –** हमारा शरीर अपने विभिन्न अंगो सहित तथा हमारी इन्द्रियां, मन, बुद्धि, भावनायें, इच्छायें आदि सब नश्वर हैं अर्थात नष्ट होने वाले हैं परन्तु हमारे अंदर जो ईश्वर का अंश है, जो आत्मा है, वह नष्ट होने वाला नहीं है, वह अमर है। शरीर के समाप्त हो जाने पर भी वह आत्मा समाप्त नहीं होता बल्कि जिस प्रकार फटे–पुराने वस्त्रों को उतार कर व्यक्ति नये वस्त्र पहन लेता है उसी प्रकार आत्मा पुराने जीर्ण–क्षीण शरीर को त्याग कर नये शरीर को ग्रहण कर लेता है। इसी का ज्ञान आत्म ज्ञान है। यही विद्या है। शेष सारा ज्ञान अविद्या है। जब व्यक्ति इस विद्या को अर्थात इस आत्म ज्ञान को प्राप्त कर लेता है तब वह परम आनन्द को प्राप्त कर लेता है और ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है।

9. **सत्य अर्थात मन, वचन व कर्म से सत्य का पालन करना –** साधारण तौर पर देखा जाता है कि हम बहुत बार सत्य का पालन नहीं करते, झूठ का आचरण करते हैं। ऐसा क्यों होता है, इसके कई कारण हैं –

   - अपनी गलती को छिपाने के लिये।
   - अपने आर्थिक लाभ के लिये या अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा के लिये अर्थात दूसरों की दृष्टि में स्वयं को ऊपर उठाने के लिये, जो कि वास्तव में एक दिखावा ही है।
   - रक्षा के लिये – आक्रांता से स्वयं बचने या दूसरे को बचाने के लिये (इस स्थिति में शायद असत्य का प्रयोग लाभकारी है)।
   - दूसरे को धोखा देकर या छल करके लाभ पाने के लिये।
   - दूसरे को परेशान करने के लिये – यदि हमें किसी दूसरे व्यक्ति को विद्वेष के कारण अथवा अन्य किसी भी कारण से परेशान करना होता है तब हम उसके साथ असत्य व्यवहार करते हैं।
   - सुख के लिये – जब हम दूसरे को झूठ बोलकर पथभ्रमित करते हैं और फिर उसकी नासमझी पर हंसते हैं तब उससे हमें सुख मिलता है।

लेकिन क्या असत्य का सहारा लेने से वास्तव में हमें लाभ होता है? कहा जाता है कि सत्य में बल होता है जबकि असत्य निर्बल होता है। एक झूठ छिपाने को हजार

झूठ बोलने पड़ते हैं। असत्य का पता चलने पर लाभ के बजाय हानि ही होती है और जिस सामाजिक प्रतिष्ठा को प्राप्त करने के लिये हम असत्य व्यवहार करते हैं वह और भी अधिक नीचे चली जाती है। जिस व्यक्ति के साथ हम असत्य व्यवहार करते हैं वह सत्य का पता चलने पर हमें सर्वदा के लिये झूठा ही मानने लगता है तथा कभी भी हम पर विश्वास नहीं करता। असत्य का प्रयोग करने से हमारे अंतःकरण, बुद्धि और जीवंतता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है और असत्यता हमें कहीं न कहीं अपने जाल में फंसाकर बिल्कुल निचले स्तर पर खड़ा कर देती है। सत्य वह शक्ति है जो हमें वास्तविक सुख और शान्ति देती है।

10. **अक्रोध अर्थात क्रोध पर नियन्त्रण** – हमें क्रोध क्यों आता है? जब हमारी इच्छित वस्तु हमें नहीं मिल पाती या इच्छित कार्य नहीं हो पाता या कार्य हमारी अपेक्षा के अनुरुप नहीं हो पाता तब हम तनाव में आ जाते हैं और हमें क्रोध आ जाता है। क्रोध के कई रुप हैं – क्षोभ या खीझ, चिड़चिड़ापन, झुंझलाहट, तेज आवाज में बोलना, अपशब्द बोलना, चेहरा तमतमाना, आंखे लाल होकर चीखना–चिल्लाना, मार–पीट करना तथा बदला लेने की भावना उत्पन्न होना। बहुत बार क्रोध अहंकार से उत्पन्न होता है। हमें तब क्रोध आता है जब हमारे अहंकार पर चोट पड़ती है।

    क्रोध से बहुत सी हानियां होती हैं जैसे कि मानसिक तनाव, मानसिक अस्थिरता, मानसिक व शारीरिक बीमारियां, दूसरे व्यक्ति के मन में हमारे प्रति दुर्भावना उत्पन्न होना, पारस्परिक संबध खराब होना, सदा के लिये दुश्मनी हो जाना।

    किसी भी दशा में क्रोध पर नियन्त्रण आवश्यक है। यद्यपि यह अत्यन्त कठिन है लेकिन संभव है।

उपरोक्त धर्म के 10 लक्षणों से यह प्रकट है कि मूल भारतीय दर्शन के अनुसार धर्म में कर्म–काण्ड का कोई महत्व नहीं है तथा मूर्ति पूजा का भी कोई स्थान नहीं है। इसके अनुसार धर्म का वास्तविक स्वरुप व्यक्ति के आचरण व व्यवहार से सम्बन्धित है। जब तक व्यक्ति का आचरण व व्यवहार उपरोक्त 10 लक्षणों के अनुरुप नहीं होगा तब तक उस व्यक्ति को हम धार्मिक नहीं कह सकते। यदि व्यक्ति अपने जीवन में उपरोक्त 10 सिद्धांतो का आचरण नहीं करता है तब उसके द्वारा किये गये पूजा–पाठ, व्रत, उपासना आदि केवल कर्म–काण्ड ही होकर रह जाते हैं और उसे धर्म का आचरण करने वाला व्यक्ति नहीं माना जा सकता।

उत्तर वैदिक काल में जब यह देखा गया कि धर्म के उपरोक्त 10 सिद्धांतो को व्यवहार में लाना प्रत्येक व्यक्ति के लिये कठिन है तब धीरे–धीरे पूजा, व्रत, उपासना आदि धर्म का अंग बनते चले गये और कालान्तर में इन्ही को धर्म समझ लिया गया। आज स्थिति यह है कि व्यक्ति यदि नियमित रुप से पूजा–पाठ, व्रत, उपासना आदि करता है तब हम उसे धार्मिक

व्यक्ति मान लेते हैं चाहे अपने आचरण एवं व्यवहार में वह धर्म के उन 10 सिद्धांतों का पालन करता हो अथवा न करता हो। देखा जाये तो यह धर्म का अपभ्रंश ही है। यह किसी भी दशा में धर्म का सही रुप नहीं है। लेकिन इस पूजा–पाठ, उपासना आदि से एक लाभ जो दिखाई पड़ता है वह यह है कि व्यक्ति को कमजोरी के क्षणों में, निराशा के क्षणों में, हार के क्षणों में, इस पूजा–पाठ, उपासना आदि से एक बडा सहारा मिलता है। यह ऐसा ही है कि जब कोई पथिक थका हुआ दिन ढले अपने रुकने के स्थान पर पहुंचता है तो वह अपने कंधे पर लटके हुये बोझे को दीवार पर लगी खूंटी पर टांग देता है और स्वयं हल्का हो जाता है। इसी प्रकार जब हम मानसिक बोझ को धर्म का सहारा लेकर ईश्वर को अर्पण कर देते हैं तो मानो उस बोझ को कंधो से उतार कर खूंटी पर टांग देते हैं। धर्म के इस स्वरुप को मनु स्मृति में दिये गये उपरोक्त 10 लक्षणों में सम्मिलित नहीं किया गया है परन्तु जीवन के अनुभव से धर्म का यह स्वरुप भी सुख और शान्ति प्रदान करने वाला है।

एक सफल जीवन के लिये यह आवश्यक है कि व्यक्ति के पास धन–समृद्धि के साथ–साथ सुखी परिवार तथा मानसिक शान्ति हो। इसमें धर्म का विशेष योगदान हो सकता है। यदि व्यक्ति धर्म के उन 10 सिद्धांतों का आचरण करता है और उन्हें अपने व्यवहार में लाता है और निर्बलता के क्षणों में ईश्वर पर भरोसा करता है तो वह एक सुखी और सफल व्यक्ति हो सकता है।

सुधीर गुप्ता, एडवोकेट
17, सिविल लाइन्स,
मुरादाबाद
फोन नं0 9412241221